Volume: 1 Issue: 16 Pages: 242-248
International Journal of Research in Academic World
E-ISSN: 2583-1615
Impact Factor: 4.714
Received: 10/November/2022 Int. J Res. Acad. World. 2022; 1(16):242-248 Accepted: 19/December/2022

बौद्ध कालीन शिक्षा पद्धति के अर्न्तगत स्त्री शिक्षा की स्थिति का अध्ययन

*[1]डॉ. नवनीत कुमार सिंह

*[1]विभागाध्यक्ष (बी.एड.), शिक्षा विभाग, चन्द्रावती तिवारी कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, काशीपुर, उधम सिंह नगर, उत्तराखण्ड, भारत।

सारांश

बौद्ध भिक्षुक जीवन पर्यन्त ब्रह्मचर्य का पालन करते थे तथा वे स्त्रियों के सम्पर्क में नहीं आना चाहते थे, इसलिए बौद्ध काल के प्रारम्भ में स्त्री शिक्षा उपेक्षित ही रही थी। परन्तु बाद में महात्मा बुद्ध ने अपनी विमाता महाप्रजापति गौतमी और अपने प्रिय शिष्य आनन्द के आग्रह पर उनके प्रवेश की अनुमति दे दी। स्त्रियों को भी पुरुषों की भाँति ब्रह्मचर्य और संघ के कठोर नियमों का पालन करना होता था। मठों और विहारों में प्रवेश करने वाली स्त्रियाँ भिक्षुणी कहलाती थी। यहीं से बौद्धकाल में स्त्री शिक्षा को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ था। स्त्री, पुरुष भिक्षुओं से अलग रहती व शिक्षा ग्रहण करती थी। कहीं कहीं स्त्रियों के लिए अलग से मठों का निर्माण हुआ, परन्तु फिर भी बहुत कम बालिकायें इनमें प्रवेश लेती थी। सचमुच संघ के नियमों का पालन करना, इनके लिए एक कठिन कार्य था। कुछ विद्वान इस युग की कुछ विदुषी महिलाओं गौतमी शीलभट्टारिका, विजयांका, प्रभुदेवी, सुभा, सुमेषा, अनुपमा, रानी नयनिका, रानी प्रभावती गुप्त (राजनीति की विद्वान), सम्राट अशोक की बहन संघमित्रा और सम्राट हर्षवर्धन की बहन के नामों का उल्लेख कर बताने का असफल प्रयास करते हैं कि इस युग में स्त्री शिक्षा की अच्छी व्यवस्था थी। स्त्री शिक्षा के सम्बतन्धी में अल्तेकर ने लिखा है– ''स्त्रियों को संघ में प्रवेश करने हेतु दी गई अनुमति विशेषकर समाज के कुलीन एवं व्यावसायिक वर्गों में स्त्री शिक्षा के निमित्त बहुत अच्छा प्रोत्साहन थी।'' अतः इस काल में अनेक महिलाओं ने अपनी विद्वता से समाज के विभिन्न क्षेत्रों में नेतृत्व प्रदान किया था परन्तु इस काल में सामान्य स्त्रियों की शिक्षा उपेक्षित रही थी।

मुख्य शब्दः बौद्ध कालीन शिक्षा पद्धति, स्त्री शिक्षा, स्थिति।

प्रस्तावना

"बुद्धं शरणम् गच्छामि", "धम्मं शरणम् गच्छामि", "संघ शरणम् गच्छामि" के साथ प्रारम्भ होने वाली शिक्षा, बौद्ध शिक्षा कहलाती थी। बौद्ध धर्म का प्रभाव भारत में 500 ई. पू. से 1200 ई० तक रहा। इसी काल को बौद्ध काल कहते हैं। प्राचीन भारत के इतिहास में छठी शताब्दी ई०पू० का काल अनेकानेक नवीन परिवर्तनों का काल माना जाता हैं। उस समय जनजीवन की परिवर्तित आवश्यकताओं की पूर्ति न कर सकने के कारण वैदिक कालीन अथवा ब्राह्मणीय शिक्षा में विशृंखलता के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे थे। आध्यात्मिकता विलुप्त हो गयी थी और वैदिक धर्म में कर्मकाण्ड और बाह्य आडंबर शेष रह गये थे। 563 ई० पूर्व में महात्मा बुद्ध का अवतरण हुआ, उनका कार्यकाल लगभग 563 ई. पूर्व से 483 ई. पूर्व तक रहा था। गौतम बुद्ध ने शिक्षा को समयानुकूल बनाने के विचार से उसके कलेवर में परिवर्तन करके बौद्ध शिक्षा का सूत्रपात किया। बौद्ध शिक्षण पद्धति का आरम्भ स्वयं महात्मा बुद्ध ने किया था जिसमें सरल और सुबोध जनभाषा में जीवन के तत्वों की चर्चा की थी। व्याख्यान और प्रश्नोत्तर के आधार पर विचारों का प्रस्तुतीकरण किया गया था। उन्होंने धर्म के प्रचार में प्रासंगिक उपमा, दृष्टांत, उदाहरण, कथा आदि का समावेश किया था जिससे उसका तत्त्व श्रोताओं को सरलतापूर्वक बोधगम्य होता था। विचार–विनिमय, तर्क और पर्यालोचन को बौद्ध धर्म में प्रतिष्ठित किया गया। बौद्ध शिक्षा पद्धति में सत्य, दार्शनिक तथ्य, तर्क, पर्यवेक्षण, मनन आदि पर अधिक बल दिया गया। बुद्ध के पश्चात् समाज में बौद्ध शिक्षा का क्रमशः प्रसार होने लगा। बौद्ध मठों और विहारों के माध्यम से बौद्ध शिक्षा का प्रचार प्रसार भारत के विभिन्न भागों में हुआ।

महात्मा बुद्ध ने जातिगत भेदभावों से अलग सभी वर्गों में धर्म का प्रचार–प्रसार किया। उन्होंने मोक्ष प्राप्ति के लिए वैदिक कर्मकाण्ड के स्थान पर ज्ञान प्राप्ति, अंहिसा, सदाचार एवं पवित्र जीवन आदि पर अधिक बल दिया था।

महात्मा बुद्ध द्वारा प्रवर्तित धर्मिक क्रांति का प्रभाव भारतीय

*Corresponding Author: डॉ. नवनीत कुमार सिंह

शिक्षा पर भी पड़ा। यह वैदिक शिक्षा प्रणाली से भिन्न होते हुए भी अनेक बातों में समानता रखती थी, जैसा कि डॉ० आर० के० मुखर्जी ने लिखा है– ''बौद्ध शिक्षा उचित रूप से विचार किये जाने पर प्राचीन हिन्दु अथवा ब्राह्मणीय शिक्षा प्रणाली का केवल एक रूप है।'' [1] बुद्ध ने एक व्यावहारिक आचार–परक धर्म दर्शन को तो विकसित किया ही साथ ही एक समन्नुत शिक्षा प्रणाली को भी जन्म दिया। जिसने कालांतर में देश काल को प्रभावित किया। बौद्ध चिन्तन धारा इस देश की सांस्कृतिक परम्पराओं में समन्वित हो गई और आज भी इस चिंतन में विश्वास रखने वाले तथा इसके अनुरूप जीवन व्यतीत करने वाले लाखों की संख्या में इस देश में विद्यमान हैं।

बौद्ध शिक्षा पद्धति में स्त्री शिक्षा

भारत में वैदिक काल के पश्चात् बौद्ध काल का प्रादुर्भाव हुआ। बौद्ध काल में जिस समाज का वर्णन हम साहित्य में पाते है वह पूर्ववर्ती भारतीय समाज का एक विकसित रूप था। बौद्ध साहित्य में नारी का जो चित्रण हुआ है वह मुख्यतः 500 ई०पू० से लेकर 500 ई0 की अवधि का है। लगभग इन 1000 वर्षों की अवधि में भारतीय समाज की स्थिति में न जाने कितने परिवर्तन हुए। इसी अवधि में यवनों का आक्रमण हुआ और बैक्ट्रिया से लेकर कश्मीर और उत्तरी पंजाब तक सैकड़ों वर्ष उनका शासन बना रहा। यवनों ने अपनी यूनानी सभ्यता का प्रभाव भारतीय समाज पर डाला। तद्नन्तर शकों, हूणों, पल्लवों, कुषाणों के आक्रमण हुए। इनमें से शकों और कुषाणों ने कई वर्षों तक भारत पर राज्य किया। शकों और कुषाणों ने भी अपनी परम्परागत मान्यताओं से भारतीय समाज को प्रभावित किया। हूण जाति के लोग अधिक वर्बर थे और उनके अत्याचारों के कारण भारत में नारियों को छिपाकर रखने को प्रक्रिया प्रारम्भ हुई। संभवतः पहली शताब्दी से पाँचवीं शताब्दी के बीच हिन्दू गृहसूत्रों और धर्मशास्त्रों का निर्माण हुआ जिनमें विदेशी जातियों से रक्त मिश्रण न होने देने के लिए विवाह और कन्यादान संबंध अनेक प्रतिबंध लगाये गये।

बौद्ध धर्म के साहित्यिक साक्ष्यों से जिस पारिवारिक पृष्ठभूमि का पता चलता है वह उत्तर वैदिक काल जैसा ही था। परिवार में कन्या का जन्म हेय नहीं माना जाता था कन्या के उत्पन्न होने पर भी आनन्द के साथ संपूर्ण संस्कार किये जाते थे। [2] परिवार के भरण पोषण की जिम्मेदारी पिता पर और पिता के न रहने पर बड़े भाई पर होती थी। [3] नारियों की शैक्षिक स्थिति पर विचार करने से ज्ञात होता है कि वैदिक युग के पश्चात् उत्तर वैदिक काल में भी नारियों के लिए उन्नत शैक्षणिक प्रबंध प्राप्त थे। उपनिषदों में जबाली, गार्गी आदि नारियाँ ब्रह्मज्ञान में निष्णात थीं और बड़े–बड़े ऋषियों से शास्त्रार्थ करती थीं। उत्तर वैदिक काल के अन्तिम चरण महाभारत काल में भी स्त्रियों की शिक्षा–दीक्षा का क्रम पूर्ववत् बना हुआ था।

महाभारत में वर्णित नारियाँ पुरुषों की सहयोगिनी तथा सहकर्मिणी के रूप में दिखाई गयी हैं, बिना शैक्षिक योग्यता के ऐसा करना संभव नहीं था। इस प्रकार वैदिक काल से लेकर बुद्ध युग तक स्त्रियों की शिक्षा और ज्ञान का प्रचार दिखाई पड़ता है। किन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि ज्यों–ज्यों वैदिक धर्म रूढ़ होता गया त्यों–त्यों नारी शिक्षा में क्रमशः ह्रास होता गया। महाभारत काल में मंत्रों की रचना करने वाली अथवा उपनिषदों के ब्रह्मज्ञान का उपदेश करने वाली नारियाँ इस काल में नहीं दिखाई पड़ती है। नारी शिक्षा का यह ह्रास बौद्ध काल में धीर–धीरे बढ़ता गया।

बौद्ध काल में लड़कियों को पतिगृह में कैसे रहना चाहिए? किस तरह से पति सेवा करनी चाहिए? उनके साथ किन कार्यों में भाग लेना चाहिए आदि के संबंध में विवाह पूर्व शिक्षा दी जाती थी। नारियों को शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार था। माकन्दिकावदान में नारियों के द्वारा रात्रि में बुद्ध के वचनों का पाठ किये जाने का उल्लेख मिलता है। [4] स्त्रियों को संगीत आदि ललित कलाओं की भी शिक्षा दी जाती थी। राजा रुद्रायन की पत्नी चंद्रप्रभा प्रसिद्धि नृत्यांगना थी। [5] स्त्रियों को परिवार संचालन की शिक्षा दी जाती थी। कला आदि की समुचित शिक्षा जैसी पुरुषों को मिलती थी, वैसी स्त्रियों को नहीं मिलती थी एवं कला विहीन व्यक्तियों को घर बसाने के अयोग्य समझा जाता था। [6]

बौद्ध काल में शैक्षिक संस्थाओं के रूप में मठों एवं विहारों का प्रदुर्भाव हुआ। इन मठों तथा विहारों में अर्हत्, उपाध्याय तथा आचार्य शिक्षा देते रहते थे। शिक्षको को आचार्य, उपाध्याय तथा गुरु कहते थे तथा मठों एवं विहारों में नारियों के प्रवेश के बाद उनकी धर्मदेशना भिक्षुणियाँ करती थीं। राजा रूद्रायन के अन्तःपुर में बौद्ध भिक्षुणी शैला को भगवान बुद्ध ने शिक्षा देने के लिए भेजा था। [7] नारी शिक्षकों को उपाध्यायिकाएँ कहा जाता था। पद्मावती एक प्रसिद्ध उपाध्यायिका थी। [8] इन उदाहरणों से परिलक्षित होता है कि कुछ स्त्रियाँ शिक्षित और विदुषी होती थी। बौद्ध काल में लौकिक जीवन में सफलता हेतु सामान्य तौर पर घर में ही शिक्षा दी जाती थी। घर में दी जाने वाली शिक्षा के अनुसार वे सास–ससुर की सेवा, पति के परिजनों का उचित सत्कार करती थीं। अन्न, पान, खाद्यादि जो भी घर में प्रस्तुत होता उससे सबकी यथायोग्य सेवा करती। प्रातःकाल समय से उठकर घर साफ करती, कंघी प्रसाधन विशेष आदि से अलंकृत होकर पति की सेवा करती। इतना होते हुए भी पति उनकी अवहेलना करता था और पत्नियों का त्याग कर सकता था। समाज में पुनर्विवाह की प्रथा प्रचलित थी। स्त्रियाँ अपने पति के संबंध में कुछ भी कहने में असमर्थ होती थीं, क्योंकि उन्हें इसी प्रकार की शिक्षा दी जाती थी।

बौद्ध युग में स्त्रियों को धार्मिक शिक्षा प्रदान की जाती थी। उन्हें धार्मिक कार्य करने में कोई प्रतिबंध नहीं था। धर्म के संबंध में बौद्ध धर्म ने भिक्षुओं के लिए जहाँ ब्रह्मचर्य संबंधी अनेक प्रतिबंध स्थापित किये वहीं दूसरी ओर नारियों के लिए संघ में इतने कठोर नियम नहीं थे। स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा धार्मिक कार्य में अत्यधिक रूचि

लेती थी। थेरीगाथा में नन्दतुरा नाम की भिक्षुणी अपने उद्‌गारों को व्यक्त करते हुए कहती है– ''मैं अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य और अनेक देवताओं की पूजा–वन्दना करती थी। नदी के घाटों में जाकर डुबकी लगाती थी। आधे सिर का मुण्डन, पृथ्वी पर सोना, रात्रि भोजन का त्याग..... इस प्रकार मैं अनेक व्रतों का पालन करती थी। [9] इस नन्दतुरा की अभिव्यक्ति से यह स्पष्ट है कि उस समय स्त्रियाँ अग्नि, चन्द्रमा, सूर्य आदि देवताओं की पूजा करती थीं। वे विभिन्न प्रकार का व्रतों का पालन स्वर्ग प्राप्ति के उद्देश्य से करती थीं।'' [10] स्त्रियों को धार्मिक कार्य करने में पुरुषों के समान ही फल मिलेगा, यह धारणा तत्कालीन समाज में थी। तत्कालीन समाज में स्त्रियाँ भी धार्मिक भावनाओं द्वारा किये गये भिक्षुओं के गुणों का वर्णन करती एवं भिक्षा देकर जो सहानुभूति दिखाती थी, उससे उनकी मातृ भावना प्रकट होती थी। नारियों अपने धार्मिक शंका समाधान के लिए महापुरुषों के पास जाया करती थी। भगवान बुद्ध से विशाखा, नकुल माता, गृहपत्नी, महाप्रजापति गौतमी आदि नारियाँ साक्षात् जाकर अपनी शंकाओं का समाधान करती थी।'' [11] भगवान बुद्ध ने इनकी शंकाओं का निवारण किया था। इससे विदित होता है कि स्त्रियाँ धार्मिक पुरुषों से अपनी शंकाओं का समाधान कराती थीं उन्हें इस प्रकार की छूट प्राप्त थी। वे धार्मिक कार्यों में दान आदि देने की प्रवृत्तियों से युक्त होती थी। वाल्यावस्था में इन्हें अधि एक छूट थी, परन्तु विवाह होने के बाद उनका एक मात्र धर्म पतिव्रता का पालन करता था। पतिव्रता धर्म न मानने पर नाक, कान आदि काटने का भी दण्ड दिया जा सकता था। [12] गृहस्थ जीवन में पतिव्रता रहना, सदाचारिणी रहना, कर्तव्य परायण रहना, उनका मुख्य धर्म हो जाता था।'' [13]

इस अनुशीलन से यह स्पष्ट है कि बौद्ध साहित्य के अनुसार छठी शताब्दी ई०पू० से लेकर छठी शताब्दी तक भारतीय समाज में स्त्रियों का धार्मिक एवं शैक्षणिक जीवन न तो वैदिक काल की तरह पूर्ण स्वतंत्र तथा विकसित था और न ही मध्यकाल की तरह अत्यन्त ह्रासशील एवं अवनति पर था। वे वैदिक धर्मानुशासन के अन्तर्गत न तो शिक्षा और वैदिक मंत्रों की अधिकारिणी थी और न पतिसेवा के अतिरिक्त अन्य धार्मिक कार्य के लिए स्वतंत्र थी, किन्तु गौतम बुद्ध के उदय एवं बौद्ध धर्म के व्यापक प्रसार के साथ–साथ स्त्रियों को पब्बजा या पब्बज्जा या प्रवज्या लेकर आत्म शुद्धि और धर्माचरण द्वारा निर्वाण प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त हो गया। परिवार में रहते हुए भी नारियाँ स्वतंत्रता पूर्वक बुद्ध, धर्म और संघ की सेवा करती एवं धार्मिक कार्य के लिए पर्याप्त दान देती थी।

महात्मा बुद्ध नारी समाज को भिक्षु धर्म में दीक्षित करने के पक्ष में नहीं थे। विनयपिटक में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि महात्मा बुद्ध नारी के प्रव्रज्या ग्रहण करने के विरूद्ध थे। महात्मा बुद्ध ने कपिलवस्तु में अपनी विमाता प्रजापति गौतमी के भिक्षुणी बनने के अनुरोध को ठुकरा दिया था और इसके बाद वे वैशाली लौट आये थे, किन्तु गौतमी बहुत सी शाक्य नारियों के साथ अपने बाल मुड़वाकर, कषाय वस्त्र पहनकर तथागत के महावन विहार पहुंची। वैशाली तक पैदल आते–आते उनके पैर सूज गये थे, उनके गात्र (शरीर, देह) धूल धूसरित हो गये थे और उनके नेत्र अश्रुपूरित थे। उनकी यह दुर्दशा देखकर आनन्द करूणार्द्र हो गये और उन्होंने बुद्ध से नारी प्रव्रज्या की प्रार्थना की और यह तर्क दिया कि स्त्रियाँ भी आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के योग्य हैं। तथागत महात्मा बुद्ध ने आनन्द के अनुरोध को स्वीकार तो अवश्य किया परंतु इसके साथ आठ शर्तें भी लगा दी–

1. भिक्षुणियाँ श्रमणों का आदर करेंगी।
2. अभिक्षु–कुल में भिक्षुणियों का वर्षावास नहीं होगा।
3. प्रत्येक पखवारे भिक्षुणियाँ भिक्षुसंघ से उपोसथ (पृच्छा और अववादोपसंक्रमण) प्राप्त करेंगी।
4. वर्षावास के अनन्तर भिक्षुणियों को दोनों संघों में दृष्ट, श्रुत और परिशंकित तीनों स्थानों से प्रवारण करनी पड़ेगी।
5. भिक्षुणियाँ दोनों संघों में पक्षमानता करेंगी।
6. दो वर्ष के अन्तर्गत छह धर्मों में शिक्षित होकर भिक्षुणी को दोनों संघों में उपसम्पदा की प्रार्थना करनी पड़ेगी।
7. भिक्षुणी को आक्रोश परिभाषण नहीं करना होगा।
8. भिक्षुओं के संबंध में कुछ कहने का मार्ग भिक्षुणियों के लिए निरूद्ध होगा।

गौतम बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य तथा प्रव्रज्याकांक्षिणी नारियों के अनुरोध को स्वीकार तो कर लिया परन्तु वे स्वयं प्रसन्न नहीं थे। उन्होंने उपरोक्त आठ प्रकार के प्रतिबंध लगाते हुए आनंद से कहा–'हे आनन्द, यदि स्त्रियों को गृहस्थ जीवन का परित्याग कर तथागत द्वारा प्रतिपदित धर्म तथा विनय के अनुसार प्रव्रज्या ग्रहण करने की अनुमति नहीं दी गई होती तो यह विशुद्ध धर्म चिरस्थायी होता। हे आनन्द, अब स्त्रियों को यह अधिकार प्रदान कर दिया गया अतः यह विशुद्ध धर्म, आनंद अब मात्र पाँच सौ वर्षों तक स्थिर रह पायेगा।'' [14]

भिक्षुणियों के लिए छह शिक्षापदों का निर्देश किया गया, जो उनके लिए वर्जित थे–हिंसा, चोरी, ब्रह्मचर्य–हीनता. मृषावाद, मद्यपान और विकाल भोजन। उनके चार अपराध भी बताये काम के वशीभूत होकर पुरुष का घुटने के ऊपर पैर दबाना, काम से पुरुष का स्पर्श या एकान्त में साथ, संघ से निष्कासित भिक्षु का अनुसरण तथा किसी अन्य भिक्षुणी के पाराजिक अपराध को छिपाना। भिक्षुणियों के संघादिशेष अपराध निर्दिष्ट हैं–

1. पुरुष के साथ घूमना,
2. चोर को दीक्षा देना,
3. अकेले घूमना,
4. संघ से निष्कासित भिक्षुणी का अनुगमन,
5. आसक्ति से पुरुष के हाथ से खाद्य लेना या दूसरी भिक्षुणी को इसके लिए उकसाना,
6. कुटनी बनना,
7. निर्मूल या लेशमात्र से किसी पर पाराजिक का आरोप

लगाना,
8. त्रिरत्न का प्रत्यारव्यान करना,
9. संघ की निंदा करना,
10. कुसंग या कुसंग के लिए प्रेरित करना,
11. सीख न लेना,
12. कुलों को बिगाड़ना।

नारी को प्रव्रज्या का अधिकार प्रदान करने के विषय में न केवल भगवान् बुद्ध, अपितु समस्त विश्व के सन्यासी इसके विरुद्ध थे। जिन धार्मिक संस्थाओं में वैराग्य की प्रमुखता है, वहाँ स्त्री की उपस्थिति से पुरुष की आध्यात्मिक साधना में व्यावधान होने की सम्भावना की उपेक्षा नहीं की जा सकती। बुद्ध ने अनुभव किया कि बौद्ध भिक्षु संघ में भिक्षुणियों की उपस्थिति के फलस्वरूप कतिपय भिक्षु संघ के उच्च नैतिक आदर्शों से च्युत हो जायेंगे। अतः वे भिक्षुणी संघ की स्थापना के विरूद्ध थे। नारी जाति को प्रव्रज्या के अधिकार से वंचित रखने का एक प्रमुख कारण यह प्रतीत होता है कि पुरुष अपनी दुर्बलताओं का आरोप स्त्री के दुष्चारित्र्य पर करता रहा है, अतः संन्यासी को नारी से दूर रहकर लक्ष्यसिद्धि में सफलता दिखती है। वानप्रस्थ आश्रम में नारी को अरण्यवास की अनुमति प्रदान की गयी, परन्तु वह बौद्ध–संघ से असमान परिस्थिति के कारण सम्मत हुआ। यौवन के अवसान पर जब मनुष्य की वासनाएँ प्रसुप्त होने लगती हैं, तब गृहस्थ वानप्रस्थाश्रमी बनता था और पति–पत्नी साथ–साथ निवृत्तिमार्ग में अग्रसर होते थे। दूसरी ओर बौद्ध संघ में व्यक्ति पन्द्रह वर्ष की वय में ही श्रामणेर बन जाता था। इस अपरिपक्व वय में स्त्री सानिध्य से व्यक्ति की दमित वासनाओं के प्रबल–वेग से प्रज्ज्वलित होने की पूरी संभावनाएँ रहती हैं। बौद्ध संघ में युवा भिक्षु और युवती भिक्षुणियों की उपस्थिति से अनेक जटिल समस्याओं के उत्पन्न होने की संभावनाएँ थीं। अतः भिक्षु भिक्षुणी सम्बन्ध कलुषित न हों, इस विचार से यह नियम बनाया गया कि यदि कोई श्रामणेर किसी भिक्षुणी के संग सहवास करेगा, तो उसे भिक्षु–संघ से निष्कासित कर दिया जायेगा।'' [15] परन्तु, भिक्षुणियों की उपस्थिति के कारण बौद्ध संघ में बड़ा भ्रष्टाचार होने लगा जिससे समाज में उसकी बड़ी बदनामी हुई। स्त्रियों को सन्यास–जीवन से दूर रखने की प्रवृत्ति का एक अन्य कारण यह भी था, कि प्राचीन काल की पितृप्रधान कुटुम्ब–व्यवस्था में स्त्री का स्थान पारिवारिक सम्पत्ति के एक अंग–सदृश था। धर्मशास्त्र के अनुसार वस्तुतः कन्या अपने पतिकुल को प्रदान की जाती थी 'कुलाय हि दीयते नारी'। स्त्री–स्वातंत्र्य का भी समाज में विरोध हुआ जिसकी अभिव्यक्ति–'न स्त्री स्यातन्त्र्यमर्हति जैसी उक्ति में हुई। नारी के बाल्यकाल, युवावस्था यथा वार्द्धक्य में क्रमशः पिता, पति एवं पुत्र उसके संरक्षक माने गये थे। पति के प्रव्रजित हो जाने पर पुत्र नारी का संरक्षक हो जाता था। अत्यन्त उत्सुक होने पर भी याज्ञवल्क्य मुनि की पत्नियों प्रव्रजित न हो पायीं। अतः प्राचीन भारतीय धार्मिक एवं सामाजिक वातावरण नारी के प्रव्रजित होने के विरूद्ध था।

धार्मिक तथा सामाजिक परम्पराओं के अतिरिक्त कतिपय व्यावहारिक समस्याओं के कारण भी भगवान् बुद्ध नारी को प्रव्रज्या का अधिकार प्रदान करने के पक्ष में नहीं थे। यदि कोई नारी वन में अरक्षित रहती, तो उसे समाज–विरोधी तत्वों का शिकार बनना पड़ता। विनयपिटक में गुंडो द्वारा वन में आरक्षित नारी के शीलभंग करने का उल्लेख मिलता है। [16] यदि वे एकान्त स्थान में स्नान भी करती रहतीं, तो गुड़े उस अवसर का लाभ उठाने से नहीं चूकते थे।'' [17] नारी को एकाकी पाकर दस्यु उनका अपहरण कर लेते थे। वानप्रस्थाश्रम में जो स्त्रियाँ अपने पति का साथ नहीं छोडती थीं, उन्हें तपोवन में पति का संरक्षण प्राप्त था, परन्तु बुद्ध को तो कठिन समस्या का सामना करना पड़ा। यदि वे स्त्रियों को भिक्षुणी धर्म में दीक्षित कर साधना हेतु वन में भेजते, तो उनके गुंड़ों तथा दस्युओं के चंगुल में फंसने की सम्भावना रहती। यदि भिक्षुणियों को भिक्षुओं के साथ रहने की अनुमति प्रदान की जाती, तो उभयपक्ष के पथभ्रष्ट होने का भय बना रहता। अतः जब स्त्रियों को प्रव्रज्या ग्रहण करने का अधिकार मिल गया और वे भिक्षुणियाँ बनने लगीं, तब यह व्यवस्था की गयी कि न तो वे एकाकी आवास के बाहर जायें न किसी नदी की ओर और न रात्रि में एकाकी वास करें या संघ के बाहर जायें। [18] यह प्रश्न उठना भी स्वाभाविक है कि स्त्रियाँ प्रव्रजित होने के लिए इतनी उतावली क्यों होने लगी? वस्तुतः भगवान् बुद्ध के समकालीन समाज में प्रव्रजित होना एक फैशन सा बन गया था, तो स्त्रियाँ ही इसमें पीछे क्यों रहतीं? प्रायः स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक धर्मभीरू होती हैं। धर्मिक जीवन व्यतीत करने की स्वाभाविक प्रवृत्ति के कारण वृद्धाएँ भिक्षुणी बनने लगीं। विधवाएँ पतिवियोगजन्य कष्ट सहन की अक्षमता के कारण धर्म–शरणागत होने लगीं। थेरीगाथा में उपलब्ध किसा गौतमी, सुन्दरी, चापा, इसिदासी, सोणा, शाक्य कुमारियाँ आदि की प्रव्रज्या के विवरणों से स्त्रियों के वैराग्य के अनेक कारणों का पता चलता है। अनेक स्त्रियों को अपने सगे–सम्बन्धियों के मृत होने पर संसार से वैराग्य हो गया तो उन्होंने भिक्षुणी बन जाने का निश्चय कर लिया। अपने पुत्र, पति, माता, पिता तथा भ्राता को खोकर पटाचारा पागल हो गयी। उस मनःस्थिति में उसे भगवान बुद्ध की शरण में जाकर शांति मिली। यही बात किसा गौतमी तथा सुन्दरी के साथ हुई। इस युग के युवकों में भिक्षु बनने की धुन सवार हो गयी थी। अनेकानेक नवयुवक अपनी पत्नियों को असहाय छोड़कर भिक्षु बन गये। पति के भिक्षु बन जाने पर पत्नी के लिए यही विकल्प रह जाता था कि या तो वह आजीवन पतिवियोग की अग्नि में जलती रहे, असहाय अवस्था में कष्ट झेलती रहे अथवा भिक्षुणी बनकर मानसिक शांति लाभ करे और अपने पति को भिक्षु रूप में ही सही, आँखों से देखकर संतोष कर लें। भिक्षुओं की अनेक युवा–पत्नियों ने दूसरा विकल्प चुना। जब पाँच सौ शाक्यकुमार भिक्षु बन गये, तो उनकी पत्नियाँ वैशाली चली गयीं और उन्होंने आनन्द के माध्यम से भगवान् बुद्ध

से निवेदन किया कि उन्हें भी प्रव्रज्या की दीक्षा दी जाय। पति के भिक्षु होने पर चापा भी अपनी संतान को उसके पितामह के संरक्षण में छोड़कर पतिपथगामिनी हो गयी। जब किसी परिवार के अधिकांश सदस्य भिक्षु बन गये, तो उस परिवार की कुछ स्त्रियाँ भी संसार से विरत होकर प्रव्रजित हो गयीं। दाम्पत्य जीवन की विफलता तथा पारिवारिक कलह के फलस्वरूप भी अनेक स्त्रियों ने भिक्षुणी बनना अंगीकार किया। इसिदासी ने तीन बार विवाह किया, परन्तु सभी विवाह असफल रहे, तो वह भिक्षुणी बन गयी। असफल प्रेम ने भी कतिपय स्त्रियों को भिक्षुणी बनाया। भद्दा नामक राजगृह की एक श्रेष्ठिकन्या एक दस्यु पर प्रेमासक्त हो गयी। उसने उस दस्यु की प्राणरक्षा की, परन्तु उस कृतघ्न दस्यु ने एक दिन श्रेष्ठिपुत्री की हत्या कर उसके मूल्यवान आभूषणों को हस्तगत करने का विचार किया। इस शड्यन्त्र का आभास मिलने पर श्रेष्ठिकन्या ने उस दस्यु को मार डाला और स्वयं भिक्षुणी बन गयी। भिक्षुणियों की उपस्थिति से बौद्ध संघ में एक नयी समस्या उत्पन्न हो गयी। अनेक गृहणियों ने उस अवस्था में प्रव्रज्या की दीक्षा ली जब वे गर्भवती हो चुकी थीं, जिसका उन्हें कोई ज्ञान नहीं था। भिक्षुणी बन जाने के कुछ काल के अनन्तर जब उन्हें गर्भ के लक्षण प्रकट होने लगे, तो संघ के अधिकारियों के लिए यह एक विकट समस्या बन गयी। चुल्लवग्ग [19] के अनुसार एक स्त्री को भिक्षुणी धर्म की दीक्षा दी गयी। उस स्त्री के गर्भ में बीजारोपण हो चुका था, पर वह उससे अनभिज्ञ थी। कुछ समय व्यतीत होने पर उस भिक्षुणी में गर्भ के लक्षण प्रकट होने लगे तो वह भावी संतान के पालन–पोषण के विषय में चिन्ता करने लगी। अन्त में संघ ने उसकी चिन्ता दूर कर दी।

उस भिक्षुणी को अपनी संतान को शैशवकालपर्यन्त साथ रखने की अनुमति दे दी गयी और शिशु की देखभाल में सहयोग प्रदान करने के लिए एक भिक्षुणी को भी साथ कर दिया गया। निग्रोधमिग जातक में भी इसी प्रकार के एक अन्य प्रसंग का विवरण दिया गया है 'राजगृह के एक धनाढ्य श्रेष्ठि की कन्या' के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया तो उसने अपने माता–पिता से प्रव्रज्या लेने की इच्छा व्यक्त की, परन्तु उस कुल की एकमात्र संतान होने के कारण उसके माता–पिता ने वैराग्यमार्ग के पथिक होने की अनुमति प्राप्त करने का निश्चय किया। यथासमय उसका विवाह सम्पन्न हो गया और वह अत्यन्त पतिपरायणा भार्या बन गयी। कुछ काल पश्चात् वह गर्भवती भी हो गयी, जिसका उसे पता नहीं चला और इसी बीच उसने भिक्षुणी बनने के लिए अपने पति की अनुमति प्राप्त कर ली। प्रव्रजित हो जाने के कुछ समय पश्चात् जब उसके शरीर में गर्भ के लक्षण स्पष्ट होने लगे, तो अन्य भिक्षुणियों ने इसकी सूचना देवदत्त को दी। समाज में इस बात का प्रचार हो जाने से संघ की बड़ी निन्दा होगी, ऐसा सोचकर देवदत्त ने तत्काल उस भिक्षुणी को संघ से निष्कासित कर दिया, परन्तु उस भिक्षुणी की प्रार्थना पर संघ में देवदत्त के निर्णय पर विचार–विमर्श किया गया और एक भिक्षुणी पर इस बात का पता लगाने का भार सौंपा गया कि गर्भ उसके संघप्रवेश के पूर्व का था अथवा पश्चात् का। जब यह निश्चित हो गया कि वह भिक्षुणी संघ प्रवेश के पूर्व ही गर्भवती हो चुकी थी, तो निष्कासन आदेश रद्द कर दिया गया। उसने यथासमय प्रसव किया। उस समय विहार के पार्श्व से कौशल नरेश प्रसेनजित् की सवारी जा रही थी। उन्होंने शिशु का क्रन्दन सुना, तो रूक गये। फिर यह विचार कर कि शिशु का पालन–पोषण भिक्षुणी किस प्रकार करेगी, स्वयं इस भार को वहन कर लिया। इस विवरण से यह प्रतीत होता है कि यदि संघ में किसी भिक्षुणी को गर्भ रह जाता, तो नियमानुसार उसे संघ से निष्कासित कर दिया जाता, परन्तु जब कोई स्त्री उस वैध गर्भ के साथ जिससे वह अनभिज्ञ हो, प्रव्रजित हो जाती तो उसे संघ से निष्कासित नहीं किया जाता। संघ गर्भवती भिक्षुणी को प्रसव की सुविधाएँ प्रदान करता था और संतान के पालन–पोषण का भार प्रायः सद्गृहस्थ उठा लेते थे, परन्तु यदि कोई उपासक इस कार्य के लिए प्रस्तुत नहीं होता, तो शिशु का बचपन संघ में ही बीतता था।

बुद्ध ने अपने प्रिय शिष्य आनंद के अनुरोध पर स्त्रियों को संघ में प्रवेश की अनुमति दे दी परन्तु संघ में भिक्षुणियों का स्थान भिक्षुओं से नीचा समझा जाता था। सौ वर्ष पुरानी भिक्खुनी भी एक नये भिक्खु से प्रकाश ग्रहण करे जैसे नियम उनकी स्थिति को सूचित करने के लिए पर्याप्त है। स्त्रियों के संघ में प्रवेश के नियम भी पुरुषों की अपेक्षा कठिन थे। उनकी परीक्ष्यमाण अवधि दो वर्ष की थी। स्थायी भिक्खुनी बनने के लिए संपूर्ण संघ की सम्मति आवश्यक थी। भिक्खुनी को भिक्खु से सर्वदा अलग रहना पड़ता था। संघ के द्वारा एक विशेष भिक्खु नियुक्त होता था जो कि भिक्खु को प्रतिमास दो बार किसी अन्य भिक्खु के समक्ष शिक्षा और उपदेश दिया करता था। भिक्खुनियों का दैनिक जीवन लगभग भिक्खु की तरह ही संचालित रहता था, किन्तु आचार्य के साथ वे अकेले नहीं रह सकती थीं। सहशिक्षा मठों एवं विहारों में स्त्रियों के रहने के लिए अलग व्यवस्था थी और साथ ही कुछ मठ एवं विहारों में केवल स्त्री शिक्षा की व्यवस्था की गई थी फिर भी कम बालिकायें इसमे प्रवेश लेती थीं। इन सब प्रतिबंधों के होते हुए भी बौद्ध संघ ने भारतीय स्त्रियों के समक्ष उनके सांस्कृतिक विकास तथा सामाजिक सेवा के प्रचुर अवसर उपस्थित किये। बौद्ध संघ की छत्रछाया में अनेक भारतीय महिलाओं ने उच्चतम आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त किया तथा अपनी विद्वता से संघ को गौरवान्वित किया। महात्मा बुद्ध की शिष्य में 'थेरी' शिष्यायें धर्मग्रंथों में प्रशंसित हैं। स्वयं बुद्ध ने 13 सुयोग्य थेरियों का उल्लेख किया है, जिनमें धम्मदिन्ना प्रमुख थी। इन थेरियों के धार्मिक पद्यों का संकलन थेरीगाथा नामक ग्रंथ में हुआ माना जाता है। बौद्ध काल में स्त्रियों को लेखन के अधिकार प्राप्त हुये थे क्योंकि स्त्रियों के लेखन सम्बंधी अधिकारों का प्रमाणिक दस्तावेज थेरीगाथा के रूप में मिलता है। जिसमें बौद्ध भिक्षुणियों ने अपने जीवन अनुभव को लिपिबद्ध किया है, 'स्नान शुद्धि से पाप मुक्ति है, यह तुझे किसने बताया? यह तो अज्ञानी मूर्ख के प्रति

उपदेश हैं। यदि जल से ही शुद्धि होती। तब तो मेढ़क, कछुए, जल के सर्प, मगर तथा अन्य जलचरों का स्वर्ग–गमन निश्चित है। [20] दूसरी पुस्तक के रूप में सीमान्तनी उपदेश है जिसकी लेखिका ने बड़ी चतुराई से अपना नाम छिपाया है और पाखंडी पुराहितों को जमकर कोसा है, इससे जाहिर होता है कि लेखिका को समाज का भय रहा होगा। लेखिका लिखती है, ''धर्म यह नहीं जो पुरोहित जी ने बताया, धर्म यह है– सत्य बोलना, सत्य काम करना, धर्म वह नहीं है जो दुनिया को दिखाने के लिए धार्मिक बन जाते हैं और मन में पापियों के गुरु रहते हैं।'' [21]

इन उदाहरणों से लगता है कि स्त्रियों ने संघ में प्रवेश करके उच्च कोटि की शिक्षा प्राप्त की और कुछ क्षेत्रों में प्रतिद्वन्दिता करके उनसे समानता का प्रमाण दिया, किन्तु इस बात का प्रमाण नहीं है कि इस समय स्त्री शिक्षा की सामान्य प्रगति हुई। इसके पीछे कई कारण थे। पहला, बौद्ध धर्म में स्त्रियों का स्थान पुरुषों से निम्नतर है। अतः सामान्य स्त्रियों की शिक्षा के प्रति ध्यान नहीं दिया गया। दूसरा संघों में स्त्रियों का प्रवेश भिक्षुओं की आज्ञा पर निर्भर था। क्योंकि भिक्षुओं को स्त्रियों से दूर रहने का उपदेश दिया जाता था। इसलिए उन्होंने बहुत ही कम स्त्रियों को संघ में प्रवेश करने की आज्ञा दी। तीसरा, संघों में प्रवेश करने का अधिकार विशेष रूप से समाज के कुलीन और व्यावसायिक वर्गों की स्त्रियों को प्राप्त हुआ। अतः इन्हीं की शिक्षा को प्रोत्साहन प्राप्त हुआ, सामान्य स्त्रियों को नहीं। चौथा, बौद्ध मठ में प्रवेश करने वाली स्त्रियाँ भिक्षुणियाँ कहलाती थी और उनके लिए अलग मठों की स्थापना की गई थी, परन्तु यहाँ भिक्षुओं के समान शिक्षा के प्रबंध नहीं थे। इन कारणों को ध्यान में रखते हुए हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि बौद्ध धर्म ने कुलीन और व्यावसायिक स्त्रियों की शिक्षा को जिनकी संख्या प्रायः नगण्य थी, प्रोत्साहन दिया पर सामान्य स्त्रियों की शिक्षा के लिए कुछ भी नहीं किया। डॉ०ए०एस० अलतेकर ने उद्धृत किया है–''स्त्री शिक्षा को बौद्ध धर्म में किसी प्रकार की प्रेरणा नहीं प्राप्त हो सकी।'' धर्म के प्रभाव के कारण अधिकांश स्त्रियाँ धर्मिक भवना से प्रेरित होकर संघ में शामिल होती थीं। विम्बिसार के पुरोहित की कन्या सोमा, धनवान पिता की पुत्री अनुपमा आदि महिलाओं ने धार्मिक प्रेरणा से संघ में प्रवेश लिया था। कुछ स्त्रियाँ अपने पारिवारिक कष्टों से मुक्ति के लिए भिक्षुणी बन जाती थीं, जैसे किसी टोकरी बनाने वाले कूबड़े की पत्नी ने अपने कठोर व्यवसाय तथा कुरूप पति से मुक्ति की इच्छा से संघ की शरण ली थी। पुत्रवती किसी गौतमी ने अपने पुत्र की मृत्यु के पश्चात् स्वयं बुद्ध से दीक्षा ग्रहण की। उसकी योग्यता से प्रभावित होकर बुद्ध ने उसे जेतवन विहार का अध्यक्ष नियुक्त किया। बनारस राज्य की उत्तराधिकारिणी राजकुमारी सुंदरी ने अपने भाई के देहान्त से पीड़ित होकर अपनी सारी सम्पत्ति का परित्याग कर बौद्ध संघ में शांति ग्रहण की। बौद्ध संघ की कतिपय भिक्खुनियों का मानसिक परिज्ञान भी बहुत उच्च कोटि का था। महाप्रजापति गौतमी के भिक्खुनी दल, जिसमें 500 शाक्य क्षत्राणियाँ थी, का बौद्ध जगत का बड़ा सम्मान था। धार्मिक आचरण तथा विद्वता में भिक्षुणियों का यह संघ भिक्षुणों के संघ से किसी प्रकार कम न था। सुक्का नामक एक ऐसी ही भिक्षुणी थी, जिसकी वाणी सुनकर लोग तृप्त हो जाते थे। अपने मधुर वचन तथा ज्ञान पद उपदेशों के द्वारा ये भिक्षुणियाँ अनेक शोक संतृप्त माताओं तथा बहनों को शांति प्रदान करती थी। कई बीमार उत्पीड़ित एवं निराश्रित स्त्रियों को भिक्षुणी संघ ने आश्रय प्रदान किया था। भिक्षुणी पटचारा अपनी दया का स्रोत दुःखियों के दुःख निवारणार्थ सतत प्रवाहित रखती थी। यद्यपि संघ की भिक्षुणियों की शिक्षा की रीतियों के सम्बंध में बौद्ध साहित्य प्राय मौन हैं, परन्तु ऐसे भी प्रमाण हैं कि नवागता भिक्षुणियों की आचार्या भिक्षुणियाँ ही होती थी अर्थात् आचार्य के उत्तरदायित्व के सम्यक् निर्वाह के लिए 'धम्म' का पूरा ज्ञान अपेक्षित था, अतः ये आचार्या अवश्य ही इतनी योग्य होती होगीं कि संघ उन्हें अध्यापन का भार सौंपने में संकोच नहीं करता था। बौद्ध काल में संघ के बाहर की गृहस्थ स्त्रियाँ भी धम्म के पालन तथा प्रसारण के प्रति पर्याप्त रूचियाँ रखती थी। विशाखा, अम्बपाली तथा सुपिया की धर्म परायणता तथा दानशीलता का बौद्ध संघ बड़ा आभारी था। इस तरह संघ के भीतर तथा संघ के बाहर दोनों ही क्षेत्रों में बौद्ध धर्म स्त्रियों के विकास में सचेष्ट रहा। बौद्ध भिक्षुणियों तथा बौद्ध उपासिकाओं की वास्तविक सेवाओं, उनके दृष्टांत तथा उनकी सहानुभूति एवं आत्मीयता से बौद्ध युग में भारतीय स्त्रियों का मानसिक एवं नैतिक विकास अवश्य हुआ। बौद्ध धर्म के प्रसार एवं जनसेवा के कार्य में भारतीय स्त्रियों ने पुरुषों का यथेष्ट हाथ बटाया।

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि बौद्ध धर्म के प्रारम्भ में स्त्री शिक्षा की कोई व्यवस्था नहीं थीं, क्योंकि बौद्ध धर्म में स्त्रियों का स्थान पुरुषों की अपेक्षा निम्न था और उन्हें संघ में प्रवेश की स्वतंत्रता नहीं थी। कुछ समय पश्चात् स्त्रियों को संघ में प्रवेश मिल गया और स्त्रियों की शिक्षा के प्रयास शुरु हुए। बौद्ध शिक्षा के प्रारम्भिक काल में स्त्री शिक्षा को कुछ प्रोत्साहन मिला और उनके लिए प्रथक मठों एवं विहारों की स्थापना की गई, किन्तु शिक्षा ग्रहण करने वाली स्त्रियों की संख्या कम थी। वैदिक काल में स्त्रियों की शिक्षा का समुचित प्रबंध था, प्रथम तीन वर्णों– ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैष्यों की बालिकाओं का उपनयन संस्कार होता था, किन्तु अब इस प्रकार का कोई प्रबंध नहीं था। स्त्रियों के संघ में प्रवेश करने का निर्णय भिक्षु लेते थे, वे केवल अल्प संख्या में ही उनके प्रवेश की अनुमति देते थे अतः स्त्रियों की संख्या कम थी।

संघ में विशेष रूप से कुलीन और व्यावसायिक वर्ग की स्त्रियों ने ही प्रवेश लिया, ये सभी भिक्षुणियाँ हो गई। साधारण स्त्रियों को बौद्ध शिक्षा प्रणाली में कोई स्थान नहीं दिया गया। जब चौथी शताब्दी ई० में बौद्ध शिक्षा केंद्रों का अत्यधिक विकास हुआ और वे अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त कर गये तब स्त्रियों को प्रवेश का अधिकार

मिला। परन्तु ऐसा नहीं प्रतीत होता कि वैदिक और उत्तर वैदिक कालीन परिस्थितियों में नारियों को जो शिक्षा विषयक अधिकार प्राप्त थे वे बौद्ध काल में पूरी तरह छीन लिए गये। इस काल में कई शैक्षिक केंद्रों पर स्त्री शिक्षा प्रचलित थी जिससे उनका चारित्रिक विकास हुआ। इस समय अनेक विदुषियाँ हुईं, जिन्होंने दर्शन एवं धर्म के क्षेत्र में अभूतपूर्व योगदान दिया। वे जीवन पर्यन्त भिक्षुणियों रहती थीं। बौद्ध धर्म के कुछ उपासकों के गृहों में स्त्रियाँ पवित्र ब्रह्मचर्य जीवन का पालन करती थी और धर्म दर्शन का गूढ़ अध्ययन करती थीं। 'थेरीगाथा' की रचना स्त्रियों ने ही की थी और कहा जाता है कि उन्हें सदाचार व्रत के पालन के कारण निर्वाण प्राप्त हो गया था। इनमें से 32 अविवाहित तथा 18 विवाहित थीं। शुभा, अनुपमा और सुमेधा आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करती रहीं। इस समय के ग्रंथों के आधार पर स्पष्ट है कि स्त्रियाँ सभी क्षेत्रों में भाग लेती थीं। कुछ स्त्रियाँ बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के लिए विदेश भी गई थीं। इस समय उच्च शिक्षा प्राप्त स्त्रियाँ अध्यापन कार्य करती थीं जिन्हें 'उपाध्याया' कहा जाता था। कुछ कवियत्रियों के नाम भी प्राप्त होते हैं जैसे–शीलभट्टारिका, प्रभुदेवी, विजयांका आदि, इन्हें अतुलनीय कहा गया है। राजनीति का क्षेत्र भी स्त्रियों से अछूता नहीं था। इस काल में अनेक रानियाँ हुई जिन्होंने सफलतापूर्वक शासनभार संभाला जैसे सातवाहन वंष की रानी नयनिका, वाकाटक वंष की रानी प्रभावती गुप्त तथा दक्षिण भारत में विजयभट्टारिका इसी श्रेणी की स्त्रियाँ थी। ये सभी सुशिक्षित थीं और राज्य कार्य, राजनीति में ये सभी दक्ष थीं। स्त्रियों को आयुर्वेद, आलोचना, वेदांत दर्शन, ललित कलाओं आदि की शिक्षा दी जाती थी, किन्तु यह शिक्षा कुलीन परिवार की स्त्रियों और भिक्षुणियों के लिए ही सीमित थी। साधारण परिवार की स्त्रियों को शिक्षा प्राप्ति के अवसर कम ही मिलते थे।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. मुखर्जी, आर० के०, एंश्यन्ट इण्डियन एजूकेशन दिल्ली, 1960, पृष्ठ 374।
2. माकन्दिकावदान, पृष्ठ 446 ।
3. दीघनिकाय, 2.246 1
4. माकन्दिकावदान, 4.57 ।
5. रूद्रायणावदान, पृष्ठ 470।
6. दीघनिकाय, भाग–1, पृष्ठ 63।
7. रूद्रायणावदान, पृष्ठ 496 द्य
8. अवदानशतक भाग–2.51.7 ।
9. थेरीगाथा 42.87–881
10. थेरीगाथा 25.31 द्य
11. अंगुत्तर निकाय, भाग–3, पृष्ठ 329–3351
12. जातक, भाग–2, पृष्ठ 302।
13. जातक, भाग–2, पृष्ठ 308–330।
14. चुल्लवग्ग, 10.1.6 द्य
15. जातक, भाग–13, पृष्ठ 159।
16. विनय पिटक, (अनु०) राहुल सांकृत्यायनः महाबोधि सभा, सारनाथ, वाराणसी, 1935, पृष्ठ 82–831
17. जातक, भाग–13, पृष्ठ 161 द्य
18. जातक, भाग–13, पृष्ठ 162 द्य
19. चुल्लवग्ग, 6.6.3 ।
20. हेमलता, माहेश्वरय स्त्री लेखन और समय के सारोकार, (आलोचना), अक्टूबर–दिसंबर, 2004, पृष्ठ 175।
21. स्त्री परंपरा और आधुनिकता, (सं०) राजकिशोर, (आलोचना), जनवरी से मार्च 2005 पृष्ठ 160।